International Journal of Leading Research Publication (IJLRP)

E-ISSN: 2582-8010 ● Website: www.ijlrp.com ● Email: editor@ijlrp.com

# वैदिक साहित्य मे पर्यावरण संरक्षण के विविध आयाम का ऐतिहासिक विश्लेषण

**शोधार्थी –प्रभांशु जैन**

**देवी अहिल्या विश्विद्यालय. इंदौर**

**सारांश -**

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण की अत्यधिक महत्ता रही है। हजारों वर्ष पूर्व भारतीय मनीषियों महर्षियों ने मानव जीवन के कल्याण और सुख के लिए पर्यावरण के महत्व और प्रकृति के सानिध्य के महत्व को समझा था। भारतीय संस्कृति का आधार वैदिक युग रहा है और उसका मूल स्रोत हैं वेद। वेदों के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि वेदकालीन समाज में पर्यावरण के महत्व और उसकी रक्षा के प्रति अत्यधिक जागरूकता थी। पर्यावरण प्रदूषण के खतरों के प्रति तत्कालीन समाज काफी सचेत था। उस काल में भूमि को ईश्वर के रूप में पूजनीय माना जाता था। वेदों में इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है भूमि जिसकी पादस्थानीय और अंतरिक्ष उदर के समान है और द्युलोक जिसका मस्तक है, उन सबसे बड़े ब्रह्म को नमस्कार है।' वेदों में प्रकृति और पुरुष का संबंध परस्पर एक दूसरे पर आधारित माना गया है। प्रकृति और विभिन्न वस्तुओं के अनुकूल रहन-सहन और खान-पान का सम्यक् वर्णन वेदों में मिलता है ।आज पर्यावरण प्रदूषण सम्पूर्ण विश्व में एक गंभीर समस्या है। चारों ओर प्रदूषण फैलाने वाले तत्व नजर आते हैं, उसकी रोकथाम अपेक्षाकृत नगण्य है। मानव जाति जिस दिशा की ओर अग्रसर है, उसे देखते हुए लगता है कि वह समय दूर नहीं जब समस्त जैवमंडल विनाश के मुंह में होगा।

**मूलशब्द** :- पर्यावरण, आवरण, संरक्षण, प्रकृति, प्राकृतिक, मानव

---

हाल ही में प्रकाशित एक रिर्पोट में यह खुलासा हुआ है कि दुनिया के 30 सबसे प्रदूषित शहरों में 21 भारत में हैं। आई. क्यू. एयर विजुअल की ओर से तैयार की गई 2019 की वर्ल्ड एयर क्वॉलिटी रिपोर्ट के अनुसार दुनिया में सबसे प्रदूषित शहर गाजियाबाद है। दूसरे स्थान पर चीन का होतन शहर तथा तीसरे स्थान पर पाकिस्तान का गुजरांवाला शहर है। दिल्ली दुनिया का पांचवां सबसे प्रदूषित शहर है।

पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है 'चारों ओर से वरण अथवा आवरण अथवा अधिकार अथवा भरण करना। प्राकृतिक तत्वों यथा वायु, जल, वर्षा, भूमि, नदी, पर्वत इत्यादि से संपूर्ण जैवमंडल का सुरक्षा कवच प्रकृति ने हमें दिया है किन्तु हम प्रकृति से प्राप्त संरक्षण और सुरक्षा को नष्ट करने में लगे हैं।[1] मनुष्य प्रकृति के अनियंत्रित दोहन में लगा हुआ है। हमारे प्राचीन वाङ्मय में प्रकृति का संतुलन बनाए रखने के लिए बारबार आह्वान मिलता है-मनुष्य अपनी इच्छाओं को

[1] जोशी. वीरेंद्र कुमार, वैदिक साहित्य मे पर्यावरण प्रबंधन, आईएसएसएन - 2319-7722

वश में रखकर प्रकृति से उतना ही ग्रहण करे कि उसकी पूर्णता को क्षति न पहुंचे। पर्यावरण के तीन मूलभूत कारक मृदा, वायु तथा अग्नि को वेदों में पृथ्वीलोक, में चित्रित किया गया है जो सर्वव्यापक शक्ति अर्थात् अन्तरिक्षलोक तथा द्युलोक अथवा आदित्य लोक के रूप विष्णु द्वारा रचित तथा संरक्षित है। बलि से दान में विष्णु ने तीन कदम में तीनों लोकों का अधिग्रहण कर लिया था जो वास्तव में इनके संरक्षण का ही प्रतीक है। वेदों में कहा गया है कि हम जाने-अनजाने ऐसा कुछ न करें जो विध्वंसक हो यदि कोई ऐसा कार्य हमसे हो जाए, जो सृष्टि के संरक्षण के प्रतिकूल हो, तो द्यावा पृथ्वी हमारी रक्षा करें।[2]

ऋग्वेद में पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में बहुत सी जगह आशंका या भय व्यक्त किया गया है जिससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि वेदों के रचयिता को मानव जाति से पर्यावरण को खतरे और 'अभ्यात् जैसे पद इसी आशंका को दर्शाते हैं और की आशंका बराबर बनी हुई थी। इसमें प्रयुक्त दूरितात इसमें किसी अज्ञात पाप से रक्षा का आह्वान भी है। वस्तुतः यह मानव द्वारा पृथ्वी के प्रति अपने दायित्वों के निर्वहन की अवहेलना से उद्भूत पाप है, जो कदापि क्षम्य नहीं है और इसमें मानव के कृत्यों से पर्यावरण की रक्षा की याचना की प्रतीति होती है।[3]

### ➢ पर्यावरण संरक्षण का भारतीय दर्शन:

देवी-देवताओं की भूमि भारत अपने धर्म, साहित्य, संस्कृति और परम्परायें, वनस्पति, जल, पर्वत, नदियों एवं पशु-पक्षी एवं मानव में सम्बन्धों की अपनी आस्थाओं को इस प्रकार समाहित किये हैं कि हम पत्थर, पशु, पेड़, जल से लेकर मनुष्य, धरती व आकाश सभी को हमारे तन-मन व आचरण में एकात्म पाते हैं। भारत की धरती मात्र भू-भाग नहीं है, यह पुण्य जगत् जननी है। पेड, पशु, पक्षी, पर्वत, नदियां, जल व मानव प्रत्येक इसी की कोख से जन्म लेता हैं। जिन्हें मिलाकर हमारा भूमण्डलीय समाज बना है, इस दर्शन की गहराई को सोचें तो लगता है कि हम पेड़ नहीं काटते-एक भाई की हत्या करते हैं। हम नदी को प्रदूषित नहीं करते वरन् अपनी बहन को जहर देकर हत्या करने पर तुले हैंए हम अवैध खनन नहीं कर रहे हैं। हम हमारी जननी वसुन्धरा के सीने को छलनी कर रहे हैं। हमारी इन्हीं स्वार्थी हरकतों ने हमारी आकाशीय सुरक्षा के कवच ओजोन की परत में छेद कर विनाश की बाढ़ का रास्ता तैयार कर दिया है और अपनी संतानों को इस तरह मरते देख धरती कराह रही है कि उसका एक स्वार्थी बेटा मनुष्य सर्वनाश का रास्ता तैयार कर रहा है।

वायुमण्डल में प्रदूषण और प्रकृति के असंतुलन के कारण वर्तमान काल में ऋतुचक्र बहुत कुछ बदल गया है तथा अनिश्चित हो गया है। कहीं अतिवृष्टि होती हैं, कहीं अल्पवृष्टि, तो कहीं अनावृष्टि। कहीं इतना हिमपात होता है कि जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। कहीं सूखा पड़ जाता है तो कहीं आती है बाढ़। ये सब प्राकृतिक विपतियां मनुष्य निर्मित

[2] सिंह. राजवीर. वैदो मे पर्यावरण चेतन. राजभाषा ज्योतिष

[3] पूर्वोक्त पुष्ट - 02

International Journal of Leading Research Publication (IJLRP)

E-ISSN: 2582-8010 ● Website: www.ijlrp.com ● Email: editor@ijlrp.com

हैं क्योंकि स्वयं मानव ने ही प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ा है। प्रकृति के असंतुलन ने ही ऋतुचक्र को बदला है जिससे जनसामान्य का जीवन भी प्रभावित हुआ है। फेफड़ों, कैंसर व हृदयरोगों एवं मानसिकतनाव का मुख्य कारण भी यही असंतुलन है। हम सभी जानते हैं कि धरती पर जीवन प्रकृति संतुलन से ही संभव हो सका है। पहले प्रकृति के विभिन्न तत्वों में संतुलन था। धरती वनस्पतियों से पूरी तरह ढक न जाय इसलिए घास खाने वाले जानवर पर्याप्त संख्या में थे और इन जानवरों की संख्या अधिक न बढ़ जाय इसलिए हिंस्र जन्तु भी थे। इन तीनों का अनुपात संतुलित और नियंत्रित था। जनसंख्या का विस्फोट नहीं हुआ था। इसलिए धरती पर्याप्त फल-फूलादि से परिपूर्ण थीं पर आज औद्योगिक विकास, वैज्ञानिक आविष्कारों तथा बढ़ती हुई जनसंख्या ने प्रकृति के संतुलन को गड़बड़कर रख दिया है।[4] बढ़ती हुई आबादी को खिलाने के लिए उसकी मात्रा में अन्न, सब्जी, फल आदि चाहिए। रहने के लिए घर, पहनने के लिए कपड़े तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विविध प्रकार की सामग्री चाहिए। इसलिए वनों का ह्रास होता गया। धरती के अनेक हरे-भरे आँचल जो प्राकृतिक सुषमा से भरपूर थे अब बंजर बनकर रह गये हैं। खेतों में डाले गये उर्वरक एवं कीटनाशी दवाइयां मिट्टी को दूषित करती हैं। बढ़ती हुई आबादी गंदगी भी कम नहीं फैलाती और यह गंदगी नदियों जलाशयों को दूषित करती है। बड़े-बड़े कल-कारखानों के धुएं से प्रदूषित होती है वायु तथा तेज चलने वाले वाहन भीषण शोर करते है। हृदय की धडकनों को तेज करने वाला शोर मानसिक तनाव बढाता है हृदयरोगों को जन्म देता है।

नैसर्गिक प्रक्रियाएं आकाश, पृथ्वी, वायु, जल तथा ध्वनि संबंधी प्रदूषण को कम करती हैं तथा पर्यावरण को शुद्ध करती हैं परंतु आज प्रदूषण इस सीमा तक पहुंच गया है कि नैसर्गिक शक्तियां पर्यावरण को पूर्ण रूप से शुद्ध करने में असमर्थ हो रही हैं। इसीलिए विश्वभर के वैज्ञानिक चिंतित हैं तथा पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने के उपाय खोजने में लगे हैं। संस्कृत साहित्य में प्रारंभ से ही प्रकृति के इन तत्वों के संरक्षण के लिए प्रयत्न किया गया है। विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद से प्रारंभ करें तो हम देखते हैं कि वैदिक ऋषि प्रकृति की भिन्न-भिन्न शक्तियों को ही विभिन्न देवताओं के नामों से सम्बोधित कर सुन्दर-सुन्दर स्तुतियों से उनकी उपासना किये हैं। ऋग्वेद ही क्यों संपूर्ण वैदिक साहित्य प्रकृति के भिन्न-भिन्न रूपों का गुणगान ही प्रतीत होता है। प्रकृति के ये नानाविध रूप विभिन्न देवताओं के रूप में उभरते हैं। इन देवताओं का लीलाक्षेत्र पृथ्वी, अन्तरिक्ष तथा द्युलोक में बंटा है। यद्यपि वैदिक काल में सृष्टि साम्यावस्था में थी, पर्यावरण प्रदूषण की समस्या नहीं थी परंतु मानव स्वभाव को जानने वाले ऋषियों ने वैदिक वाङ्मय में जीवन की इस प्रकार से व्याख्या की जिससे पर्यावरण की समस्या उत्पन्न ही न हो और यदि कहीं समस्या उत्पन्न भी हो तो उसके समाधान जुटाने का प्रयत्न वैदिक ऋषि द्वारा किया गया है।

वैदिक ऋषि की यह सजगता और जागरूकता वैदिक साहित्य में पदे पदे परिलक्षित होती है। यही कारण है कि वैदिक ऋषि संपूर्ण पृथ्वी को अपनी माता के रूप में उद्घोषित करता हुआ कहता है-

[4] जोशी. वीरेंद्र कुमार, वैदिक साहित्य मे पर्यावरण प्रबंधन, आईएसएसएन - 2319-7722

**माता भूमिः पुत्रो अहम् पृथिव्याः।**[5]

- **वैदिक साहित्य मे वनस्पति संरक्षण :-**

वृक्षों की मानव समाज को बहुत बडी देन है वृक्ष जीवन के लिये वर्षा को आमंत्रित करते है। वे कार्बनडाईआक्साईड लेते और आक्सीजन छोडते है। नगरों के मध्य पेड-पौधों को नगरों के फेफड़े कहा जाता है। लिपि बद्ध करने हेतु भोज पत्र व कागज के लिये लकड़ी भी वृक्षों से ही मिलती है। अपने गुणों के कारण हमारे देश में वृक्षों की पूजा की जाती रही है। मानव और पर्यावरण ग्रंथ में वनस्पति के विकास क्रम और उसकी कम होती हुई संख्या पर चिन्ता प्रकट की गई है। इसी ग्रंथ में कहा गया है कि प्रकृति ने सबसे अधिक वनस्पति को उत्पन्न किया, दूसरे क्रम में मासांहारी तथा तीसरे क्रम में मनुष्य को लेकिन वर्तमान में मनुष्य सबसे अधिक और वनस्पति सबसे कम रह गई है, जो जनसंख्या बढ़ने का परिणाम है। वैदिक ग्रंथों में वर्णित वृक्ष वनस्पति सरंक्षण के प्रति वर्तमान दौर में लगाव की अभिवृति विकसित करने की जरूरत है।

पर्यावरण वैज्ञानिकों के अनुसार वृक्ष एवं वनस्पतियां पर्यावरण की सुरक्षा के लिये सर्वाधिक उपयोगी है जो कि जीवनदायक एवं स्वास्थ्यप्रद वायु ऑक्सीजन छोड़ते है तथा जीवन के लिये हानिकारक वायु को अपने में ग्रहण कर लेते है। वृक्षों के इस महत्त्व को दृष्टिगत रखते हुए ही वेदमन्त्रों में वृक्षों, वनस्पतियों, औषधियों एवं यनों तथा वनों के रक्षकों तक को नमस्कार किया गया है और इनके मधुमय हितकारी एवं शान्तिदायक होने की कामनाएं की गयी है। यजुर्वेद और ऋग्वेद में औषधी और वृक्ष-वनस्पति विषयक विवरण मिलते हैं। जिनमें -'नमो वृक्षेभ्यः', 'नमो वन्याय च वनानां पतये नमः', 'औषधीनाम् पतये नमः', 'मधुमान्नो वनस्पतिः', 'औषधयः शान्ति वनस्पतयः शान्ति ।

यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि वैदिक एवं लौकिक संस्कृत साहित्य में वृक्ष, वनस्पति, वीरुध एवं औषधि प्रायः एक ही अर्थों में प्रयुक्त हुए हैं। मन्त्रद्रष्टा ऋषि इस तथ्य को भली-भांति जानते थे कि वृक्ष एवं लताएं जहां अपने फल फूल एवं काष्ठ आदि द्वारा समृद्धि प्रदान करते हैं, वहां वे शुद्ध वायु द्वारा पर्यावरण को माधुर्यमय तथा प्राणवान् भी बनाते हैं। ऋग्वेद का अरण्यानी सूक्त पर्यावरण के महत्त्व की दृष्टि से वैदिक काल का राष्ट्रीय काव्य कहलाने का अधिकारी है। ऋग्वेद में अरण्यानीको देवता के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

यर्जुवेद में वनानां पतये नमः कहा गया है, इसी प्रकार "या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा " कहकर ऋषियों ने वनों और औषधियों को मानव कल्याण की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्वीकार किया है और उसे देवताओं से प्राचीन प्रतिष्ठित किया है।

[5] अथर्ववेद 12.1.12

ऋग्वेद में कहा गया है कि औषधि का आवहान करने वाला व्यक्ति अथवा मुनि या रोगी, औषधि से रोग दूर करने के लिए और पति स्वरूप सुख को प्राप्त करने के लिए आवाहन करता है. यह ऊपर की ओर फैलने वाली गुणकारक तथा रोग नाशक औषधि है।

अथर्ववेद में कहा गया है कि दिव्य गुण वाली, शक्तिवर्द्धक और मानव को जीवन देने वाली बेल-बूटियों को देवता की भांति आदर देते हुए आह्वान किया जाता है, इसलिए इन जड़ी-बूटियों की रक्षा की जानी चाहिए, उखाड़ कर खरपतवार की तरह व्यर्थ नहीं फेकना चाहिए। अथर्ववेद के एक मन्त्र में अश्वत्थ (पीपल) कुश, कांस (दर्भ), सोमलता, चावल और जौ के गुणों को जानने की प्रेरणा दी गई है।

अथर्ववेद में ही कहा गया है कि जिस प्रकार माता बालक को दूध पिलाकर बड़ा करती है वैसे ही ये वनस्पतियां भी मानव कल्याण के लिए दूध देती है। अर्थात रस प्रदान करके रोगों का निदान करती है। अथर्ववेद में वानस्पतिक औषधियों को वायु के प्रचण्ड तूफान की तरह माना गया है जो रोग को वृक्ष की तरह उखाड़ कर फेंक देती है।

वैदिक साहित्य में पीपल, तुलसी और अशोक वृक्ष के महत्त्व पर काफी बल दिया गया है। वैदिक वाङ्मय में ब्राह्मण वर्ग को ही पीपल की समिधा से हवन करने का अधिकार प्राप्त था, अन्य किसी को नहीं, इस धार्मिक दृष्टिकोण के कारण पीपल वृक्ष की रक्षा होती है। संस्कृत वाङ्मय में कहा गया है कि पीपल गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ और आक की समिधाओं से हवन करने पर विजय प्राप्त होती है।

### ➢ वैदिक साहित्य मे वृक्ष संरक्षण

पर्यावरण के संतुलन में वृक्षों के महान योगदान एवम् भूमिका को स्वीकार करते हुए मुनियों ने वृहत् चिंतन किया है। मत्स्य पुराण में उनके महत्व को स्वीकार करते हुए कहा गया है कि दस कुओं के बराबर एक बाड़ी होती है, दस बावडियों के बराबर एक तालाब, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र और दस पुत्रे के बराबर एक वृक्ष होता है।

**दश कूप समा वापी, दशवापी समोहद्रः ।**

**दशह्रद समः पुत्रे, दश पुत्रे समो द्रुमः ।।**[6]

अतः हमें वृक्षों को संरक्षित करने के साथ-साथ अधिकाधिक वृक्षों का रोपण भी करना चाहिए।

[6] मत्स्य पुराण - 154;512

- **वैदिक साहित्य मे वायु संरक्षण-**

शुद्ध वायु जीवन की आधार शिला है। ऋग्वेद में वायु को विश्व भेषज अर्थात् सबका चिकित्सक कहा गया है तथा यह कामना की गई है कि सर्वत्र शुद्ध वायु प्रवाहित हो

**आ बात वाहि भेषजं वि बात वाहि यद्रपः।**

**त्वं हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे।।"**[7]

वायु को अशुद्धि से बचाने के लिए वैदिक काल में यज्ञ विधि को अपनाया गया था। वायु को शुद्ध एवं गुणकारी बनाने के लिए जो अणु-भेदक शक्ति यज्ञाग्नि में है वह अन्यत्र नहीं।"[8] यज्ञ को वेदों में आकाश और पृथ्वी दोनों को पवित्र करने वाला बताया गया है तथा यज्ञ कर्म में प्रवृत होने की प्रेरणा दी गयी है।

- **वैदिक साहित्य मे जीव जन्तु संरक्षण :-**

वेदों में पशु हिंसा का केवल निषेध ही नहीं किया गया बल्कि मनुष्यों को पशु एवं उनके जीवन की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहने का सकारात्मक निर्देश भी दिया गया है। अथर्ववेद में कहा गया है कि "द्विपाद" (दो पैर वाले) और "चतुष्पाद" (चार पैर वाले) जीवों की हत्या न करों। इसी वेद में कहा गया है कि गाय, घोडे और मनुष्य की हत्या न करों। यजुर्वेद में पशुओं का नाम लेते हुए कहा गया है कि गाय, गवय (नील गाय), द्विपाद पशु, एक शफ वाले पशु, चतुष्पाद पशु, ऊँट और भेड़ आदि को न मारों।

यजुर्वेद में घोड़े की हत्या को दण्डनीय अपराध बताया गया है। वेदों में गाय का बहुत महत्त्व बताया गया है, और उसमें सभी देवों का निवास बताया गया है। ऋग्वेद में गाय को इन्द्र की प्रतिनिधि बतातें हुए उसे सोम का पहला घूंट कहा गया है। ऋग्वेद के एक अन्य मंत्र में गायों से कल्याण की बात कहीं गई है।ऋग्वेद के छठे मण्डल में भारद्वाज ऋषि ने 28वें सुक्त में गौ की स्तुति की है।[9] इसी तरह दसवें मण्डल के 19वें सुक्त का देवता गौ है। पवित्रता और लगाव की दृष्टि से ऋग्वैदिक ऋषियों के मन में जो स्थान गाय को प्राप्त था यो अन्य किसी पशु को प्राप्त नहीं था ऋग्वेद के छठे मण्डल में भारद्वाज ऋषि ने गाय की महत्ता और पवित्रता पर जानकारी दी है। वैदिक व्यवस्थाकार पशु पक्षी और वन्य प्राणियों के संरक्षण की बात पर्यावरण संवर्धन की जागरूकता पैदा करने के लिए करता है, साथ-साथ इनकी मानव जीवन के लिए

[7] ऋग्वेद - 10 / 137 / 3

[8] वाजपेयी. दीप्ति. संस्कृत साहित्य मे पर्यावरण संरक्षण, पैराडाइज पब्लिशर. जयपुर 2011. 115

[9] ऋग्वेद - 6 / 28

उपयोगिता के परिप्रेक्ष्य में उल्लेख करता है। वृक्ष-वनस्पति, गाय के दूध, औषधि आदि की प्रशंसा करने वाले सैकड़ो सूक्त वेदों में मिलते हैं।

ऋग्वेद के प्रणेता ऋषि मानव और मानवेत्तर जीव जन्तुओं के साथ ही वनस्पति, पेड़-पौधों में भी उसी एक सत्ता के विविध रूपों को देखते हैं। विश्वामित्र ने ऋग्वेद के सप्तम मंडल में देवताओं के साथ औषधियों और वृक्षों के लिए भी स्तोत्र कहे हैं कि "इन्द्र, वरूण, मित्र, अग्नि, जल औषधियां और वृक्ष हमारे इस स्तोत्र को सुने, मरूतों के पास रहकर हम सुख से रहेगे, तुम सदा हमारी रक्षा करों।[10]

### ➢ वैदिक साहित्य में भूमि संरक्षण-

समस्त प्राणी जगत का आधार एवं आश्रय स्थल पृथ्वी ही है। अतः वेदों में भूमि को माता के समान वन्दनीय माना गया है। भूमि औषधियों को उत्पन्न करने वाली, वनस्पतियों व शस्य सम्पदा को धारण करने वाली. बहुमूल्य धातुओं की खान है। अतः उसे सर्वविध संरक्षित करना चाहिए।

अथर्ववेद में वर्णित है कि पृथ्वी के जिस भाग को खोदा गया हो उसे तुरन्त भर देना चाहिए। पृथ्वी के हृदय व मर्मस्थल को कभी क्षति मत पहुँचाओ-

**यत् ते भूमि विखनापि क्षिप्रं तदपि रोहतु।**

**मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम्।।"[11]**

पर्यावरण की दृष्टि से भूमि की उपयोगिता को स्वीकारते हुए यजुर्वेद में पृथ्वी का अनावश्यक दोहन न करने का निर्देश दिया गया है-

पृथिवी द्वंह पृथिवि मा हिंसी।"

### ➢ वैदिक साहित्य मे जल संरक्षण

प्राचीन भारतीय संस्कृति में जल को जीवन माना गया है-जलमेव जीवनम्। हमारे वैदिक साहित्य में जल के स्रोतों, जल का समस्त प्राणियों के लिए महत्व, जल की गुणवत्ता तथा उसके संरक्षण के लिए बहुत अधिक बल दिया गया है। वेदों में जल को औषधीय गुणयुक्त कहा गया है। चरक संहिता में आचार्य चरक ने भी भूजल की गुणवत्ता पर चर्चा की है।

---

[10] ऋग्वेद - 7 / 11

[11] अथर्ववेद - 12 / 1 / 35

प्राचीन भारतीय संस्कृति में माना गया है कि ब्रह्मण्ड में जितने भी प्रकार का जल है उसका हमें सरंक्षण करना चाहिए। नदियों के जल को सर्वाधिक संरक्षणीय माना गया है क्योंकि वे कृषि क्षेत्रों को सींचती है जिससे प्राणिमात्र का जीवन चलता है। नदियों का बहता जल शुद्ध माना गया है। इसलिए नदियों को प्रदुषित नहीं करना चाहिए।

अथर्ववेद में सप्तसैन्धव नदियों का उल्लेख मिलता है। ये **सात** नदियां निम्न है-

1. सिन्धु नदी 2. विपाशा (व्यास) नदी 3. शतुद्रि (सतलज) नदी 4. वितस्ता (झेलम) नदी

5. असिक्की (चेन्नब) नदी 6. सरस्वती नदी

ऋग्वेद में इन नदियों को माता के समान सम्मान दिया गया है-

**ता अस्मश्यं पमसा पिन्वमाना शिवादेवीरशिवद।**

**भवन्त सर्वा नधः अशिमिहा भवन्तु।**[12]

नदियां जल का वहन करती हुई, सभी प्राणिमात्र को तृप्त करती हैं। भोजनादि प्रदान करती हैं। आनन्द को बढ़ाने वाली में तथा अन्नादि वनस्पति से प्रेम करने वाली हैं।

जल संरक्षण पर बल देते हुए ऋग्वेद में कहा गया है कि जल हमारी माता जैसे है। जल घृत के समान हमें शक्तिशाली और उत्तम बनाये। इस तरह के जल जिस रूप में जहां कहीं भी हो वे रक्षा करने योग्य हैं-

**"आपो अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन ना द्युत्व्वः पुनन्तु।"**[13]

जल संरक्षण के लिए वेदों में वर्षा जल तथा बहते हुए जल के विषय में कहा है कि हे मनुष्य! वर्षा जल तथा अन्य स्रोतों से निकलने वाला जल जैसे कुएं, बावडियां आदि तथा फैले हुए जल तालाबादि के जल में बहुत पोषण होता है।

**निष्कर्ष :-**

आज विश्वपर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, उससे कर्म में असन्तुलन उपस्थित हो गया है। इससे बचने के लिए वेद-प्रतिपादित सात्त्विक भाव अपनाना पड़ेगा। पर्यावरण को स्वच्छ सुन्दर रखने का आग्रह सिर्फ भावनात्मक स्तर पर किया गया हो, ऐसी बात नहीं है। वैज्ञानिक अनुसन्धान के सन्दर्भ में भी सात्विकता की भावना से अनुप्राणित होकर गहरे मानवीय सम्बन्ध की स्थापना पर पर्याप्त बल दिया गया है। वेद का स्पष्ट निर्देश है कि लोग प्रकृति के प्रति सदा पूर्ण श्रद्धा रखी

[12] यजुर्वेद 13 / 18

[13] ऋग्वेद 7 / 50 / 4

और आनन्दमय जीवन व्यतीत करने के निमित्त उससे पर्यावरण की अनुकूलता प्राप्त करते रहे। शुक्ल यजुर्वेद का शाश्वत सन्देश है पवन मधुर, सरस व शुद्ध तथा गतिशील रहे. सागर मधुर वर्षण करें। ओज प्रदान करने वाली अन्नादि वस्तुएँ भोजन के बाद मधु के समान सुकोमल बन जाएँ। रात के साथ-साथ दिन भी मधुर रहे। पृथ्वी की धूल से लेकर अन्तरिक्ष तक मधुर हो। न केवल जीवित मनुष्यों का, अपितु पितरों का जीवन भी मधुमय रहे। सूर्य मधुमय रहे. गाये मधुर दूध देने वाली हों। निखिल ब्रहमाण्ड मधुमय रहे। यह श्लोक प्रकृति की सुंदरता और सामरस्य को बयान करता है और सभी प्राणियों के जीवन में मधुरता, प्रेम और सम्पूर्णता की आवश्यकता को संकेत करता है। यह हमें प्रकृति के संरक्षण, सजीवता की एकता और प्रेम के महत्त्व को समझने के लिए प्रेरित करता है।

---

## ➢ संदर्भ सूची


1. जोशी. वीरेंद्र कुमार, वैदिक साहित्य मे पर्यावरण प्रबंधन, आईएसएसएन – 2319-7722
2. सिंह. राजवीर. वैदो मे पर्यावरण चेतन. राजभाषा ज्योतिष
3. पूर्वोक्त पुष्ट – 02
4. जोशी. वीरेंद्र कुमार, वैदिक साहित्य मे पर्यावरण प्रबंधन, आईएसएसएन – 2319-7722
5. अथर्ववेद 12.1.12
6. मत्स्य पुराण – 154;512
7. ऋग्वेद – 10 / 137 / 3
8. वाजपेयी. दीप्ति. संस्कृत साहित्य मे पर्यावरण संरक्षण, पैराडाइज पब्लिशर. जयपुर 2011. 115
9. ऋग्वेद – 6 / 28
10. ऋग्वेद – 7 / 11
11. अथर्ववेद – 12 / 1 / 35
12. यजुर्वेद 13 / 18
13. ऋग्वेद 7 / 50 / 4